إن الدين عند الله الإسلام

मानवता का धर्म

इस्लाम

लेखक :

हज़रत मौलाना मुहम्मद अली साहब

अनुवादक :

मुहम्मद ज़ुनेद अतहर "सत्यार्थी"

प्रकाशक :

अहमदिय्या अंजुमन इशाअते इस्लाम हिन्द

कलम्दीन पोरा, श्रीनगर १९०००२

August कश्मीर, हिन्द 1976

إِنَّ الدِّينَ عِندَ اللَّهِ الْإِسْلَامُ

मानवता का धर्म

इस्लाम

लेखक :

हज़रत मौलाना मुहम्मद अली साहब

अनुवादक :

मुहम्मद ज़ुनेद अतहर "सत्यार्थी"

प्रकाशक :

अहमदिय्या अंजुमन इशाअते इस्लाम हिन्द

कलम्दीन पोरा, श्रीनगर १९०००२

August कश्मीर, हिन्द 1976

दो शब्द

'अहमदिय्या अंजुमन इशाअते इस्लाम, हिन्द' की ओर से प्रस्तुत पुस्तक मानवता का धर्म इस्लाम प्रकाशित करते हुए हमें बड़ा आनन्द हो रहा है। यह पुस्तक वास्तव में, हज़रत मौलाना मुहम्मद अली द्वारा लिखित अंग्रेज़ी पुस्तक 'Islam-- The Religion of Humanity' का हिन्दी रूपान्तर है। इस का उद्देश्य हिन्दी भाषी भाइयों को इस्लाम से परिचित कराना है। इस बात का निर्णय यारी पोरा (कस्बा यारीपोरा तहसील कुलगाम कश्मीर) में आयोजित अंजुमन के गत वार्षिक सम्मेलन में किया गया था। इस काम का बेड़ा महाराष्ट्र में हमारे प्रतिनिधि जनाब मुहम्मद जुनेद अतहर सत्यार्थी ने उठाया था। खुदा का शुक्र है कि यह पुस्तक प्रकाशित होकर आप के कर-कमलों में पहुंच रही है।

हमें आशा है कि इस पुस्तक के द्वारा राष्ट्रीय एकता और सद्भाव और शाँति को प्रोत्साहन मिलेगा।

श्रीनगर
((कश्मीर)

डॉ० ख़ुर्शीद आलम तरीन
प्रकाशन-सचिव

अहमदिय्या अंजुमन इशाअते
इस्लाम, हिन्द।

आभार प्रदर्शन

हज़्रत मुहम्मद (सलाम उन पर) की एक सत् - वाणी (हदीस) इस प्रकार है :

'वह व्यक्ति खुदा का आभारी नहीं होता जो इनसानों का आभार न माने ।'

प्रस्तुत पुस्तक के अनुवादित परिच्छेदों को मेरे मित्र जनाब एहसानुल क़दीर सिद्दीक़ी साहब ने पूर्णतया पढ़ा और परामर्श दिये। इसलिए मैं उनका हृदयतल से आभारी हूँ।

मंग्रूल पीर
(अकोला, महाराष्ट्र)

जुनेद अतहर सत्यार्थी

"लोगो ! निःसंदेह तुम्हारे पालनहार खुदा की ओर से (पवित्र कुर्आन के रूप मे) उपदेश और मनों के विकारों के) लिए चिकित्सा और आस्तिकों के निमित्त मार्गदर्शिका और (भव्य) कृपा आ चुकी है।" [१० : ५७]

विषय-विन्यास

विषय	पृष्ठ

प्रस्तावना अ

श्रद्धा सुमन इ

(a) महात्मा गांधी की ओर से

(b) सरोजिनी नाईडू के विचार

(c) जॉर्ज बर्नाड शॉ द्वारा मूल्यांकन ए

(d) निपोलियन बोनापार्ट की बिलक्षण अभिलाषा ऐ

मानवता का धर्म इस्लाम

1. इस्लाम 1
2. इस्लाम नाम की महत्ता 2
3. इस्लाम की विशेषताएँ 4
4. एक ऐतिहासिक धर्म 5
5. इस्लाम के बुनियादी सिद्धान्त 7
6. इस्लाम में अल्लाह का अर्थ 9
7. खुदा का एकत्व 11
8. 'वही' [भग्वद-ज्ञान] 13
9. मरण के बाद का जीवन 15
10. मृत्यु के बाद वाला जीवन, पदार्थी जीवन का ही सतत क्रम है। 16

विजय	पृष्ठ
11. मरण के उपरान्त की अवस्था, इहलोक आध्यात्मिक जीवन ही का प्रतिबिम्ब है।	18
12. फरिशतों Angles पर आस्था	21
13. आस्था का महत्व	22
14, कर्म के सिद्धान्त	24
15. आराधना	24
16. उपवास	26
17. हज्ज	26
18. मनुष्य के पारस्परिक कर्तव्य	27
19 इस्लामी भाईचारा	28
20. सत्ता का सम्मान	29
21. ज़कात	31
22. नैतिक शिक्षा की व्यापकता	33



प्रस्तावना

[एक अंग्रेज़ नवमुसलिम श्री लॉर्ड उसूर हेडले द्वारा लिखित अंग्रेज़ी प्रस्तावना का हिन्दी रूपान्तर]

मौलवी मुहम्मद अली द्वारा लिखित इस्लाम की शिक्षा का सार पढ़कर मैं बहुत प्रसन्न हुआ। जिस योग्यता के साथ उन्होंने हमारे मज़हब के समस्त मौलिक सिद्धान्तों को इस संक्षिप्त पुस्तिका में संचित कर दिया है, इससे मैं अत्यधिक प्रभावित हुआ हूं। प्रस्तुत पुस्तक अपनी सरलता और शुद्धता के कारण, सत्य की खोज करने वाली व्याकुल आत्माओं के लिए एक लाभदायक साधन सिद्ध होगी। इसलाम का ऐसा संक्षिप्त परिचय कराना बहुत आवश्यक है। शिक्षा के व्यापक प्रसार और धार्मिक विषयों पर बुद्धिपूर्वक तर्क वितर्क के बावजूद, इस देश (इङ्गलैण्ड) में इस्लाम के विषय में शोचनीय अज्ञान फैला हुआ है।

इस का एक बड़ा कारण वह भ्रान्तियाँ हैं जो ऐसे लोगो की ओर से फैलाई गई हैं जो पाश्चात्य मस्तिष्क को हमारे धर्म की ओर से जानबूझ कर अज्ञान में रखना चाहते हैं, यद्यपि वे इस धर्म की वास्तविकता से परिचित हैं। इसलाम को जिस गलत रूप में यहाँ प्रस्तुत किया जाता है, इसके कुछ दृष्टान्त इस प्रकार हैं: 'मुसलमान, मुहम्मद (सलाम उन पर) की पूजा करते हैं,' 'एक से अधिक पत्नियाँ रखना, इसलाम में अनिवार्य है,' 'स्त्रियों में आत्मा नहीं होती'... ... ...आदि-आदि। परन्तु ये सब विचार निराधार

हैं। हम केवल अल्लाह की आराधना करते हैं। जो एक है। "(हे अल्लाह) हम तेरी ही आराधना करते हैं और तुझी से सहायता माँगते हैं (1 : 4 कुरान)"। यही शब्द एक मुसलिम की दैनिक प्रार्थना के बोल हैं। इसी प्रकार: "संसार में खुदा की ओर से मानव जाति की प्रगति की विभिन्न अवस्थाओं में जो रसूल (प्रेषित) भेजे गए थे, हम उन सब का समान रूप से आदर करते हैं और नबियों (Prophets) के बीच किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करते। खुदा के अतिरिक्त कोई आराध्य नहीं है, हज़रत मुहम्मद (सलाम उन पर) अल्लाह के रसूल और अन्तिम नबी हैं। हज़रत मुहम्मद (सलाम उन पर) के आगमन से पूर्व सारे अरब देश में बहु-पत्नि पद्धति (Polygamy) बड़े ही ज़ोरों पर प्रचलित थी। आपने इस पर प्रतिबन्ध लगाया और पत्नियों की संख्या निर्धारित की। आपने 'बाला-वध' की बुरी प्रथा को सदा के लिए समाप्त कर दिया। यह अमानवीय प्रथा विश्व को विनाश के किनारे खड़ा कर चुकी थी। आजकल बहुत कम मुसलमान एक से अधिक पत्नियाँ रखते हैं। और मुसलिम समाज में स्त्रियों की दशा ईसाई देशों की स्त्रियों से कहीं अधिक संतोष जनक है।

मुझे आशा है कि इस लघु पुस्तक को संसार भर में अधिकसे अधिक प्रसारित किया जाएगा। मुझे विश्वास है कि इस के परिशीलन से इसलाम की वास्तविकता से अपरिचित लोग अवश्य ही एक नवीन आभा और मन की एक अलौकिक शान्ति प्राप्त कर सकेंगे। वे लोग जो अभी तक इस धर्म की ओर से भ्रांतियां में पड़े हुए हैं इस पुस्तिका के प्रकाश में अपनी शंकाओं को दूर कर सकेंगे······

[अल्हाज लार्ड] हेडले फ़ारूक़ (लन्डन)

हज़रत मुहम्मद साहब (शांति स्वरूप बनें) की सेवा में श्रद्धा-सुमन :-

(१) महात्मा गाँधी की ओर से :—

हज़रत मुहम्मद [(सलाम उन पर) 'शाँति स्वरूप बनें'] एक महान् नबी थे। वे वीर थे और अल्लाह के अतिरिक्त किसी से न डरते थे। उन की उक्तियों और कर्मों में भिन्नता कदापि नहीं थी। (जो कुछ आप कहते उस पर कार्यान्वित अवश्य होते थे...... अनुवादक) आप जो कुछ सोचते उस पर कार्य अवश्य करते थे। *नबी साहब (सलाम उन पर) एक साधारन प्रकृति के व्यक्ति थे। यदि वे चाहते तो धनवान बन सकते थे। जब मैं ने उन कठिनाइयों और विपत्तियों का अध्ययन किया जो स्वयं आप, आप के परिवार के सदस्य और आप के अनुयायी मित्र (सहाबा) इच्छापूर्वक सहन करते थे, तो मैं अपने आँसू न रोक सका। भला मुझ जैसा सत्य-मीमांसक ऐसे महान् व्यक्ति को श्रद्धासुमन अर्पित किये बिना कैसे रह सकता है? आपका मन सदैव ईश्वरोन्मुख रहता था। आप सदा खुदा से डरते रहते थे। आपके मन में मनुष्यमात्र के प्रति अघाद प्रेम और वात्सल्य था। यह भी आपकी अभिनव सरलता, आप की निःस्वार्थ वृत्ति, संधियों और वचनों के प्रति (आपका) सम्मान, अपने मित्रों और अनुयायीओं के प्रीति आपकी लतुल्य श्रद्धा और भाईचारा, आपकी निर्भीकता, खुदा पर आप का अटल विश्वास और अपने अध्यात्मक संदेश (mission) की सफलता

---

* '(हे नबी) आप अपनी इच्छा से बात नहीं करते। यह (तो खुदा की) 'वही' मात्र है जो अवतारित की जाती है। सर्व शक्तिमान खुदा ने उसे सिखाया है (53 : 5—5)- अनुवादक

के प्रति आपका दृढ़ विश्वास/तलवार नहीं बल्कि यही सद्गुण, यही सिद्धान्त थे जिनके कारण प्रत्येक बाधा और कठिनाई बह गई।

[एक अंग्रेज़ी लेख से रूपान्तर]

(२) '(पवित्र) कुर्आन में ऐसा कोई आदेश नहीं मिलता जिसके द्वारा इस्लाम में बलपूर्वक प्रवेश करवाने का संकेत हो। इस पवित्र ग्रंथ में तो स्पष्ट शब्दों में यह घोषणा कर रखी है: "धर्म (इसलाम) में बलात्कार (ज़बरदस्ती) नहीं हो सकता (2 : 256)" इसलाम के पैगम्बर (सलाम उन पर) का संपूर्ण जीवन भी इस (झूठे अभियोग) का खंडन करता है............ और अगर अपने प्रचार के लिए इस्लाम बल पर निर्भर करता तो यह (धर्म) विश्वव्याप्त न बन पाता।

[महात्मा गांधी, पैगामे-सुल्ह (उर्दू साप्ताहिक)
(अहमदिय्या हेड क्वार्टर्स, लाहौर)
Nov. 24, 1954, अंग्रेज़ी से रूपान्तर]



(३) **सरोजिनी नाईडू के विचार :-**

'इस्लाम ही वह पहला धर्म है जिसने जन-तन्त्र का उपदेश दिया है और इसे कार्यान्वित कर दिखाया है क्योंकि जब (मस्जिद के— अनुवादक) मीनार से अज़ान की आवाज़ लगाई जाती है तो नमाज़ी (उपासक जन) एकत्र हो जाते हैं। इस्लाम की जनतन्त्रात्मक प्रणाली का प्रदर्शन दिन में पाँच बार होता। तब एक ग्रामीन और एक प्रशासक अगल-बगल एक ही पंक्ति में खड़े होकर एक खुदा की महत्ता की घोषणा करते हैं यर्थात् '(अल्लाह-अक्बर'

[अल्लाह मात्र सर्वश्रेष्ठ है]) । अनेक बार, मैं इसलाम की इस अखंड एकता के दर्शन कर आश्चर्य चकित रह गई हूँ, जिस से मनुष्यों के बीच अलौकिक भाई चारा उत्पन्न होता है।

['Speeches and Writings of Sarojini Naidu,' Madras, (1918; Page—169) से हिन्दी रूपान्तर]

(४) जॉर्ज बर्नार्ड शॉ द्वारा मूल्याङ्कन :—

"मैं ने मुहम्मद (सलाम उन पर) के धर्म का सदा ही सम्मान किया है क्योंकि इसमें एक आश्चर्य जनक जीवनशक्ति है। मेरी दृष्टि में यही एक-मात्र धर्म है जो गतिशील विश्व में जीवन की समस्त परिवर्तनशील दशाओं पर नियन्त्रण कर सकता है, एक ऐसा धर्म जो प्रत्येक काल के लिए रूचिकर हो सकता है :··· ··· में भविष्य - वाणी कर चुका हूँ कि मुहम्मद (सलाम उन पर) का धर्म निकट भविष्य में यूरोप को स्वीकर्णीय होगा ।········· मैंने मुहम्मद (सलाम उन पर) के जीवन का अध्ययन किया है। मेरा मत है कि वे एक आश्चर्य जनक व्यक्ति हैं और वे तनिक भी ईसा-विरोधी (Anti Christ) नहीं हैं, बल्कि उन्हें तो मानव-जाति का मुक्तिदाता ही कहा जा सकता है।

मेरा यह अडिग विश्वास है कि उन (मुहम्मद) जैसा कोई व्यक्ति यदि आधुनिक संसार का कारोबार ग्रहण करले तो निश्चय ही वह इस (संसार) की सारी समस्याओं का ऐसे रूप में समाधान करदेगा जिस के फलस्वरूप संसार में शांति और सुख उत्पन्न हो जाएगा, जो कि वर्तमान संसार की सब से बड़ी मांग है।"

[The Last Law Giver]
(पृष्ट 67—68)

(५) विश्व विख्यात निपोलियन बोनापार्ट की विलिक्षण अभिलाषा ।—

"मुझे आशा है कि अब वह दिन दूर नही जब मैं समस्त देशों से बुद्धिमान और सुशिक्षित लोगों को एकत्र कर सकूंगा और कुर्आन के सिद्धान्तों पर आधारित एक सर्वसामान्य प्रबंधिका स्थापित कर सकूँगा क्योंकि यही (सिद्धान्त) सच्चे हैं और (यही सिद्धान्त) मनुष्य को प्रसन्नता का मार्ग बता सकते हैं।"

[Bonaparte et Islam]
by: Cherfils, Paris
Frane, (Page: 125) 1914



मानवता का धर्म

इस्लाम

इस्लाम : हज़रत मुहम्मद (सलाम उन पर यानी वे शांति स्वरूप हैं) द्वारा सिखाए हुए धर्म का नाम इस्लाम है। आप लगभग चौदह सौ वर्ष पूर्व अरब देश में प्रकट हुए थे। इस धर्म को पाश्चात्य देशों में मुहम्मडनिज्म (Muhammadanism) कहा जाता है। यह नाम वास्तव में Christianity और Buddhism जैसे नामों के अनुसरण स्वरूप अपनाया गया है परन्तु स्वयं मुसलमानों के लिए यह बिल्कुल नवीन है। पवित्र कुर्आन के अनुसार 'इस्लाम' का अर्थ 'मानवता' के समान ही व्यापक है। यह नाम हज़रत मुहम्मद (सलाम उन पर) के उपदेशों के फलस्वरूप घटित नही हुआ अपितु आप से पहले आए हुए रसूलों (Divine Messengers) का आदि धर्म भी इसलाम ही था। इस्लाम ही आदम, नूह (Noah), इब्राहीम, मूसा (Moses) और ईसा (सलाम इन सब पर) का धर्म था। इस प्रकार खुदा की ओर भेजे गए प्रत्येक नबी (Prophet) का धर्म इसलाम था चाहे जिस देश-विशेष में उन्हें भेजा गया हो। इतना ही नहीं अपितु प्रत्येक शिशु का धर्म भी मूलत: इस्लाम ही होता है। यह बात हज़रत मुहमम्द (सलाम उन पर) ने सर्व

प्रथम बताई है। आप इस प्राचीन धर्म के जन्मदाता नहीं अपितु इसके अभिनव विश्लेषक हैं। पवित्र कुर्आन के अनुसार 'इस्लाम,' मनुष्य का नैसर्गिक धर्म है। ,'अल्लाह द्वारा निर्मित प्रकृति जिसमें उस ने संपूर्ण मानव समाज की सृष्टि की …………यही सही धर्म। (अध्याय 30, श्लोक 29)

और क्योंकि पवित्र कुर्आन के अनुसार, विभिन्न कालों में भिन्न २ राष्ट्रों के बीच खुदा की ओर से नबी भेजे गए थे, और प्रत्येक नबी का धर्म अपने विशुद्ध रूप में इसलाम के अतिरिक्त कोई अन्य धर्म नहीं था। वास्तव में यह धर्म सुदुर अतीत तक विस्तृत है, और उतना ही व्यापक हैं जितनी स्वयं मानवता। मौलिक सिद्धान्त तो सदा समान रहते हैं, केवल अमौलिक बातों में (आकस्मिक) मानवीय आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन होते रहते हैं। हज़रत मुहम्मद (सलाम उन पर) के आगमन के साथ ही इस्लाम अमने नवीनतम रूप में संसार के सामने आया है।

इस्लाम नाम की महत्ता

अन्य धर्मों के समर्थकों के प्रतिकूल 'इस्लाम' नाम मुसलमानों द्वारा आविष्कृत नहीं हैं। इसके विपरीत पवित्र कुर्आण द्वारा ही इस धर्म को यह नाम दिया गया है: "मैं ने तुम्हारे निमित्त इस्लाम को पसन्द किया है।" (5:3) एक दूसरे संदर्भ में ये शब्द देखने को मिलते हैं: "निःसंदेह अल्लाह के पास धर्म इस्लाम है।

इसके अतिरिक्त यह नाम एक गंभीरता लिए हुए है। 'इस्लाम' नाम से इस धर्म का सार-तत्त्व मालूम हो जाता है। इस का सर्व प्रथम अर्थ 'शान्ति-स्थापना' है। शान्ति का विचार इस्लाम

का केन्द्र-बिन्दू है। पवित्र कुर्आन के अनुसार मुसलमान वह है जिस ने अल्लाह और मनुष्य के साथ शाँति स्थापित कर ली हो। इस प्रकार एक मुसलमान के लिए आवश्यक है कि वह अपने सृष्टा और उसकी सृष्टि के साथ शान्ति कायम करले। खुदा के साथ शान्ति का अर्थ यह हैं कि उसकी आज्ञा की सम्मानित किया जाए इसका कारण यह है कि खुदा ही हर प्रकार की पवित्रता का स्रोत और संसार की प्रत्येक भलाई का उद्गम है। और मनुष्य-मात्र से शांति-स्थापन का अर्थ है कि मानव-मात्र के साथ उपकार किया जाए। ये दोनों बातें पवित्र कुर्आन में इस प्रकार प्रस्तुत की गई हैं: "हाँ जो कोई अल्ला के सम्मुख आत्म-समर्पण करने वाला हैं और परोपकार करने वाला है, ऐसे ही लोग न तो भय-भीत होंगे और न ही शोकाकुल होंगे ।" (2:112 पवित्र कुर्आन के अनुसार मुक्ति का केवल यही एक मार्ग है। और क्योंकि एक मुसलमान पूर्ण रूप से शान्ति प्राप्त कर लेता है मानसिक शाँति और संतोष का अनुभव करता है (16 : 106) इसलिए 'शान्ति' ही एक मुसलमान का दूसरे मुसलमान के प्रति स्वागत शब्द है (अर्थात् वे परस्पर मिलते समय एक दूसरे को 'अस्सलामुअलै- कुम' कहते हैं जिसका अर्थ है: ' तुम पर अल्लाह की शान्ति हों' ········ अनुवादक)। स्वर्ग निवासियों का स्वागत-शब्द भी यही होगा। (10 : 10)

इसके अतिरिक्त (56 : 26) के अनुसार "वे उस (स्वर्ग) में न कोई व्यर्थ शब्द सुनेंगे और न पाप-युक्त वार्ता, वे तो केवल 'शाँति-शाँति" ही सुनेंगे।" पवित्र कुर्आन में खुदा एक नाम ('अल-सलाम–अल-मु'मिन'—अनुवादक) "शाँति का सृष्टा, सुरक्षा देने वाला" भी हैं। (59 : 23) और वह ध्येय जिस की ओर इस्लाम मार्ग - दर्शन करता है उसे "शांति-धाम" (दार अलसलाम) कहा गया है। (10 : 25), 'अल्लाह, शाँति धाम की ओर निमंत्रित

करता है।' इस प्रकार 'शांति', इस्लाम का निचोड़ है। इस्लाम की जड़ भी 'शांति' है और इस वृक्ष से उत्पन्न होने वाले फल भी शांति के प्रतीक हैं। इस प्रकार इसलाम उत्तम रूप में एक शांति-मार्ग है।

इस्लाम की विशेषताएँ

इस्लाम का सर्वश्रेष्ठ गुण यह है कि इसके मानने वालों के लिए यह अनिवार्य है कि वे अटल विश्वास रखें कि संसार के समस्त भूत-कालीन महान धर्म जो इसलाम से पूर्व बीत चुके हैं, वे सब वास्तव में अल्लाह की ओर से प्रतिपादित किए गए थे। इस प्रकार इस्लाम ने विश्व के समस्त धर्मों के बीच शांति, सहवास और एकता की नींव रखी है कुर्आन शरीफ का यह तर्क है कि संसार के सब धर्मो की एक सामान्य नींव है जिसे कुर्आनी शब्दावली में 'वही' (भगवद्ज्ञान) कहते हैं। परन्तु इस्लाम का उद्देश्य केवल इस सत्य का प्रचार-मात्र नहीं था जो कि भूत काल में पृथ्वी-मंडल के विभिन्न देशों के एक दूसरे से तटस्थ होने के कारण इस से पहले प्रसारित न किया जा सका था। किन्तु वर्तमान युग क्योंकि विज्ञान के आविष्कारों का युग है, वायुयानों, रेलों, समुद्री जहाजों के कारण अब अतीत कालीन दूरियाँ समाप्त हो चुकी हैं। टेलीफोन, रेडियो, टेलीवीज़न आदि के आविष्कारों ने अब संसार को संकुचित कर दिया है। इस लिए मानव जाति को मानव धर्म से अवगत कराने के मार्ग में अब कोई बाधा नहीं रही.........अनुवादक) अपितु विभिन्न (अतीत कालीन) धर्मो में काल चक्र की कति अर्थात् कालान्तर के फलस्वरूप उत्पन्न हुई त्रुटियों को दूर करना, गलत धारणाओं और अमौलिक अडम्बरों के बीच से सत्य के उज्जवल रत्न को चुग लेना और वे तथ्य जो अतीत कालीन विशिष्ट सामाजिक परिस्थितियों और अपरिपक्व मानसिक दशाओं के कारण

सिखाए नहीं जा सके थे, और सब से अधिक महत्त्वपूर्ण यह बात है कि अतीत में मनुष्यों के मोक्ष और मार्गदर्शन हेतु दिए गए वे सारे सत्य जो कि खुदा की 'वही' के माध्यम से किसी राष्ट्र को दिए गए थे, उन सब को एक ग्रंथ के रूप संकलित करना और अन्तिम यह कि विकासोन्मुख मानवता की समस्त अध्यात्मिक (Spiritual) और नैतिक (Moral) आवश्यकताओं की पूर्ति भी करना······ ये सब इस्लाम के उद्देश्य है। पवित्र कुर्आन (98 : 51) में हमें ये मार्मिक शब्द देखने को मिलते हैं : "पवित्र पृष्ट जिन में अतीत कालीन सही ग्रन्थ हैं।" पवित्र कुर्आन में बड़े ही स्पष्ट शब्दों में यह बात कही गई है कि : "आज मैं ने तुम्हारे लिए तुम्हारा धर्म सम्पन्न (Perfect) कर दिया हैं और तुम्हारे ऊपर अपनी विभूति (नेमतों) को पूरित कर दिया और तुम्हारे लिए इस्लाम को पसन्द करता हूँ (5 : 3)। इस प्रकार इस्लाम इस बात की मांग करता है कि हम उस सम्पूर्ण सत्य पर आस्था रखें जो किसी भी राष्ट्र के किसी नबी (Prophet) पर अवतरित किया गया हो और सभी राष्ट्रों के नबियों का हृदय से सम्मान और आदर करें। हज्रत मुहम्मद (सलाम उन पर) के लाए हुए धर्म का यह सिद्धान्त एक अनुपम गुण है।

एक ऐतिहासिक धर्म

संसार के धर्मों के बीच इसलाम के स्थान और मानव जाति के पवित्र ग्रन्थों में पवित्र कुर्आन की महत्ता के विषय में, मैं विस्तार पूर्वक बात कह चुका हूँ। परन्तु मैं संक्षेप में इसलाम के एक और गुण का उल्लेख करना चाहता हूँ। निःसंदेह इस्लाम एक ऐतिहासिक धर्म है और इसका पवित्र संस्थापक भी एक महान् ऐतिहासिक व्यक्ति है। इस बात का समर्थन इस्लाम के कट्टर

ग्रालोचकों ने भी किया है। हज़रत मुहम्मद साहब सलाम उन पर) के पवित्र जीवन की प्रत्येक घटना को इतिहास के प्रकाश में देखा जा सकता है। कुर्ग्रान शरीफ, इस्लाम के समग्र ग्राध्यात्मिक ग्रौर सामाजिक नियमों का स्रोत हैं। इस पवित्र ग्रन्थ में ग्रापके व्यक्तिगत जीवन के मार्मिक संकेत देखे जा सकते हैं। इस तथ्य का समर्थन मिस्टर बासवर्थ स्मिथ ने निम्नलिखित शब्दों में किया है :—

'एक ऐसा ग्रन्थ जो ग्रपनी शुद्धता में सर्वथा ग्रनोखा है, इस की सुरक्षिता.........इस की शब्दावली की परम्परागत शुद्धता पर ग्राज तक किसी ने कोई विशेष शंका व्यक्त नहीं की।' इसी प्रकार इस्लाम के एक कट्टर ग्रालोचक मिस्टर मयूर ने भी एक ग्रवसर पर लिखा है : 'कदाचित विश्व में (पवित्र कुर्ग्रान के ग्रतिरिक्त —ग्रनुवादक) कोई ग्रन्य ग्रन्थ (ऐसा) नहीं है जो बारह शताब्दियों तक इस प्रकार शुद्ध रह सका हो' फिर वॉन हॅमर के साथ सहमत होकर वही विद्वान ग्रागे इस प्रकार लिखता है : 'हम (पवित्र) कुर्ग्रान को उसी ग्रडिग विश्वास के साथ मुहम्मद साहब, (सलाम उन पर) के बोल मानते हैं, जिस ग्रास्था के साथ मुसलमान इसे 'खुदा की वाणी' समझते हैं।' एक मुसलमान के हाथों में 'वही' द्वारा प्रतिपादित किया हुग्रा ग्रन्थ, उसके मार्ग दर्शन के लिए कई शताब्दियों से सुरक्षित ग्रवस्था में, विद्यमान है। उसके पास एक भव्य नबी का भव्य जीवन - चरित है जिस में मानव जीवन के विविध ग्रनुभव जो कि जीवन यापन के उत्तमोत्तम निति-नियम प्रस्तुत करता है। इस प्रकार एक मुसलमान को पूरा विश्वास होता है कि उसने, खुदा की ग्रोर से, किसी भी देश में प्रतिपादित की हुई 'वही' की ज्योति का निषेध नहीं किया हैं। ग्रौर यह भी सत्य है कि वह किसी भी सत्-पुरुष के सद्-गुणों की ग्रवहेलना

नहीं करता। इस प्रकार वह न केवल यह कि प्रत्येक अतीतकालीन 'वही' पर ईमान रखता है और सारे राष्ट्रों के पवित्र मार्ग दर्शकों को मन्यता देता है अपितु उनके अजर-अमर तथ्यों का अनुसरण भी करता है और सारे सत्-पुरुषों के गुणों का अनुकरण भी करता है।

इस्लाम के बुनियादी सिद्धान्त

पवित्र कुर्आन के प्रारम्भ में ही इसलाम के प्रमुख सिद्धान्त दिए हुए हैं। यह पवित्र ग्रन्थ इन शब्दों से आरम्भ होता है। "यह (एक ऐसा) ग्रन्थ है जिस में (किसी प्रकार की) कोई दुविधा नहीं है, कर्तव्य पालन करने वाले लोगों, के लिये मार्ग-दर्शिका है —— जो अदृश्य (Unseen) पर आस्था रखते हैं और आराधना [नमाज़] का प्रयोजन करते हैं और जो कुछ हमने उन्हें दे रखा है, उसमें से खर्च करते हैं, और वे लोग उस (सत्य) पर विश्वास करते हैं जो (हे नबी) आप पर अवतरित किया गया हैं, और (उस सत्य पर भी) जो आप से पूर्व अवतरित किया गया था, और वे परलोक (Here-after) पर विश्वास करने वाले हैं।"
(2:2—4)

उपरोक्त आयतों (श्लोकों) में पवित्र कुर्आन का अनुसरण करने वालों के लिए मौलिक सिद्धान्त प्रस्तुत किए हैं। इन में आस्था (Beleif की तीन प्रमुख बातें और व्यवहार की दो प्रधान बातें बताई गई हैं। दूसरे शब्दों में ये श्लोक तीन सैद्धान्तिक और दो व्यवहारिक अधिनियम अपने अन्दर लिए हुए हैं। इन सिद्धान्तों का अलग अलग विवरण करने से पूर्व यह बात स्पष्ट करना आवश्यक है कि इसलाम में मात्र मौखिक आस्था का कोई

महत्व नहीं है यदि इसे कार्यान्वित न किया जाए। इन श्लोकों ही से यह बात प्रमाणित होती है। पवित्र कुर्आन में सत्यवादियों का एक लक्षण अनेक बार इन शब्दों में बताया गया हैं: 'वे लोग जो आस्था रखते हैं और सत्कर्म करने वाले हैं।' 'सही आस्था ही वह उत्तम बीज है जो उत्तम वृक्ष के रूप में बढ़ सकता है, बस शर्त यह है कि जिस ज़मीन (हृदय) में इसे बोया गया है, उस में इसे खाद्य मिलती रहे। यह खाद्य सत्कर्मों द्वारा ही प्राप्त हो सकती है।

इन पॉच सिद्धान्तो के विषय में ध्यान देने योग्य दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि आस्था और व्यवहार के ये उज्जवल नियम किसी न किसी रूप में सर्वमान्य हैं। ये नियम इस प्रकार हैं:–
(1) अल्लाह पर आस्था (2) 'वही' (Divine Revelation) और (3) आगामी (परलोक) ज़ीवन; ये आस्था की तीन प्रमुख बातें हैं। व्यवहार की दृष्टि से दो प्रमुख बातें ये हैं:—

(१) अल्लाह की आराधना जिस, जिससे उसका प्रेम-प्रवाह स्रवित होता है और (२) अल्लाह के दिते धन, सामग्री आदि में से वंचित-गण पर खर्च करना या इसलाम की शब्दावली में 'ज़कात देना' कहते हैं। इस प्रकार ये दोनों बातें क्रमशः हमारे अल्लाह विषयक और मनुष्य-विषयक दायित्वों का पता देती है। इन पाँच सिद्धान्तों पर समस्त राष्ट्र एकमत हैं और विश्व के सारे धर्म इन्हें मान्यता देते हैं। वास्तव में इसलाम के इन पाँच बुनियादी सिद्धान्तों की छाप स्वयं मानव-प्रकृति पर भी पड़ी हुई हैं। अब मैं इन नियमों को पवित्र कुर्आन के प्रकाश में अलग-अलग समझाने का प्रयत्न करूँगा।

इस्लाम में अल्लाह का अर्थ

आस्था के तीन सिद्धान्तों में सर्व प्रथम (अदृश्य) अल्लाह पर विश्वास है। मनुष्य जाति का प्राचीनतम इतिहास इस बात का साक्षी है कि आदि युग से ही मनुष्य एक महान् और वृहत्तर अध्यात्मिक शक्ति के अस्तित्व को मान्यता देता आ रहा है। प्राचीन काल में विभिन्न राष्ट्रों और देशों में ख़ुदा के विषय में अनेक धारणाएँ प्रचलित थीं। किन्तु इस्लाम एक ऐसे वास्तविक ख़ुदा का विचार प्रस्तुत करता है जो समस्त राष्ट्रीय सामुदायिक देवी देवताओं से सर्वथा अलग है। इस्लाम का ख़ुदा किसी राष्ट्र विशेष का ख़ुदा नहीं है जो किसी राष्ट्र विशेष ही तक अपनी कृपाओं और विभूतियों को सीमित रखता हो। पवित्र कुर्आन के पहले ही वाक्य में उस ख़ुदा को राष्ट्रों (दुनियाओं) का पालनहार कहा गया है (1:1)। इस प्रकार ख़ुदा के विषय में सर्वोच्च विचार प्रस्तुत कर, इस्लाम ने मानवीय भाई चारे की परिधि (Circle) को विस्तृत करा दिया है जिसमें भूमंडल के समस्त राष्ट्र सम्मिलित कर दिये गए हैं। ऐसा करके इस्लाम ने मानव को व्यापक दृष्टि-कोण प्रदान कर पारस्परिक सहानुभूति और परोपकार की भावनाओं को नई दिशाएँ दी हैं। ख़ुदा के अनेक उत्तम गुणों में जिन का विवरण कुर्आन शरीफ में है, दया (Mercy) सब से विस्तृत है कुर्आन शरीफ का प्रत्येक सूर: (अध्याय) 'अर्रहमान' और 'अर्रही'म' जैसे पवित्र और वैभव-शाली नामों से आरम्भ होता है। अरबी के इन दोनों शब्दों के लिये वास्तव में कोई समानार्थी हिन्दी शब्द उपलब्द नहीं है। इन के अर्थ बहुत गम्भीर हैं। ('अर्रहमान' का अर्थ है "वह मेहरबान ख़ुदा जिस में अतिशय प्रेम और वात्सल्य हैं" और 'अर्रहीम' का अर्थ है "अत्याधिक दयावान"। इस प्रकार इन दोनों शब्दों में

अतिशयोक्ति है --(अनुवादक)

पवित्र कुर्आन में ख़ुदा की दया (M y) के विषय मे (श्लोक) है : "मेरी दया सारी वस्तुओं पर आच्छादित है" (7:156) इसीलिए जिस रसूल (Messenger of God) ने ऐसी महिमा वाले ख़ुदा का परिचय दिया उसे पवित्र कुर्आन में उचित 'रहमतुललिल-आलमीन' (अर्थात् विश्व के सारे वर्तमान और भावी राष्ट्रों के लिए दयावान रसूल) का शुभ नाम देकर संबोधित किया गया है (21:107)। (महात्मा बुद्ध जी की भविष्य वाणियों में मैत्रिय बुद्ध का नाम भी हज़रत मुहुम्मद (सलाम उन पर) को ही दिया है।——अनुवादक) ख़ुदा ही सारी विद्यमान वस्तुओं (जड़-चेतन) का एक मात्र सृष्टा है। यदि उसके विश्व-सृष्टा होने का निषेध किया जाए तो उसकी सर्वोच्चता और महिमा ही निर्अर्थक हो जाती है। पवित्र कुर्आन में ख़ुदा के गुणों का एक मात्र व्योरा इन प्रकाशमान शब्दों में दिया गया है :

'वह अल्लाह है जिसके अतिरिक्त कोई आराध्य नहीं है, अदृश्य और दृश्य का ज्ञान रखने वाला, वह मेहरबान (कृपालु) दयावान है। वह अल्लाह है जिसके अतिरिक्त कोई आराधना का पात्र नही है। (वही) अधिपति, पावन, शान्ति दाता, प्रनिक्षक, सर्वोच्च निरीक्षक, शक्तिमान, हरेक क्षति और हानि का पूरक, प्रत्येक महिमा का एक मात्र स्वामी; अल्लाह शाश्वत है, उन क्षतियों से सर्वथा मुक्त है जो वे (अनेकेश्वर वादी) उसके साथ सम्मिलित करते हैं। वह अल्लाह है, सृष्टा, आत्माओं का बनाने वाला (बारी : अरबी)*,

---

* 'आत्माओं का आविष्कारक' के लिए मूल अरबी शब्द 'बारी है। ख़ुदा का एक दूसरा नाम 'खालिक' है। इसका अर्थ 'भौतिक-जगत' अर्थात् "जड़-जगत का सृष्टा" है।

रूप आकार देने वाला, मानव मन में आसकने वाली समस्त सर्वोत्कृष्ट और सुन्दरतम विशिष्टताएं उसी (खुदा) को शोभा देती हैं; आकाश और पृथ्वी में विद्यमान प्रत्येक वस्तु उसी की महिमा और परिपूर्णता का जयगान करती है। और (वही) खुदा सर्वशक्तिमान बुद्धिमान है (59 : 22-24) वह अल्लाह है, सर्वश्रोता, सर्व-द्रष्टा, विपत्तियों को हरने वाला, दाता, कृपावान, पापों को हरने वाला निकटतम, जो सच्चाई से प्रेम करता और बुराई से नफ़रत (घृणा) करता है। जो समस्त मानवीय कार्यक्लापों का हिसाब लेगा। इन के अतिरिक्त पवित्र कुर्आन में खुदा के अन्य अनेक गुणों का वर्णन किया गया है। इन गुणों का चिन्तन और मनन खुदा के अर्थ को अधिक गम्भीर और वैभवशाली बनाता है। ईश्वरीय गुणों का ऐसा विशद ब्योरा अन्यत्र उपलब्ध नहीं है। यह श्रेय तो एकमात्र पवित्र कुर्आन ही को प्राप्त है।

खुदा का एकत्व

खुदा के एक होने का विचार पवित्र कुर्आन का केन्द्र बिन्दु है। इस ब्रह्माण में प्रचलित 'निसर्ग के विधान' (Laws of Nature) स्वयं मानव-प्रकृति और आदि कालीन नबियों की शिक्षाए ये तीनों बाते हमें बार बार आकर्षित करती हैं, इन की सुव्यवस्था इस बात का परिचय देती है कि इनका 'एक सृष्टा' अवश्य है। (१) आकाश में भ्रमण करने वाले असंख्य नक्षत्रों, ग्रहों और उपग्रहों का जरा विचार तो कीजिए, क्या वे अपनी बाह्य विभिन्नताओं के होते हुए भी सारे के सारे एक और केवल एक विश्वव्यापी विधान (Universal Law) के आधीन नहीं हैं? (२) पृथ्वी पर आप जो कुछ देखते हैं. उस पर भी चिन्तन कीजिए। इस धरती के जड-लोक और चेतन लोक, यहां के वनस्पति जीवन,

पशु-जीवन और कड़ी पृथ्वी (जिस पर ये सारे जीवन आधारित हैं) यहां समुद्र, सरिताएँ, उच्च पर्वतः क्या इन सब विभिन्नताओं में 'एकता' दृष्टिगोचर नहीं होती ? (३) आप स्वयं अपनी आन्त्रिक प्रकृति पर गंभीर चिन्तन कीजिए। तुम्हारे रंगों की विभिन्नता और भाषाओं की भिन्नताएँ कैसी आश्चर्यजनक हैं। क्या इन सब विभिन्नता के होते हुए भी तुम एक ही मानव-जाति नहीं हो ? इस परिवर्तनशील संसार की प्रत्येक वस्तु को देखिये, बनाव और बिगाड़, विभिन्न वस्तुओं की उत्पत्ति और विकास, जिसकी गति एक क्षण के लिए भी अवरुद्ध होती दीख नही पड़ती। क्या इन सब कार्य क्लापों में भी एक सामान्य विधान दिखाई नहीं देता ? यदि, वास्तव में, आप निसर्ग में विभिन्नताओं के बीच स्पष्टता एकता का अवलोकन करते हैं, तो क्या आपको इसमें सृष्टा के एकत्व का लक्षण दिखाई नहीं देता ? फिर मानव-प्रकृति के विश्व-सनीय प्रमाण का विचार कीजिए, किस प्रकार; अनेकेश्वरवादी होकर भी मनुष्य खुदा के एकत्व पर आस्था रखता है। इसके अतिरिक्त यदि आप संसार के धर्म ग्रन्थों का परिशीलन करें, महान् अध्यात्मक मार्गदर्शकों और धर्मात्माओं के सदुपदेशों की खोज करें तो ज्ञात होगा कि ये सब खुद के एकत्व के ही प्रमाण देते हैं। सार यह निर्विवाद तौर पर कहा जा सकता है कि निसर्ग के कानून, मानव प्रकृति और विश्व के आदि कालीन सत्पुरुषों के प्रमाण एकस्वर होकर खुदा के एक होने की घोषणा करते हैं। यही सिद्धान्त इस्लाम का सब से महत्वपूर्ण तत्व है।

वही [भग्वद्--ज्ञान]
(Divine Revelation)

'वही' अर्थात भग्वद्ज्ञान पर आस्था रखना, इस्लाम का दूसरा वुनियादी सिद्धान्त है। प्रत्येक मुसलमान के लिए पवित्र कुर्आन की ओर से यह अनिवार्य है कि वह न केवल कुर्आन शरीफ को अपितु समस्त कालों और विश्व के सारे देशों में 'वही' द्वारा भेजे हुए धार्मिक ग्रन्थों की भी सच्चा समझे। संसार के समस्त अवतरित धर्मो की नींव खुदा की 'वही' है। परन्तु यह सिद्धान्त विभिन्न राष्ट्र में बहुत ही सीमित रूप में माना गया है। कुछ धर्मों में ऐसा विचार है कि इस प्रकार का शाश्वत ज्ञान मानव जाति को केवल अतीत काल ही में एक बार प्रदान किया गया था। अन्य धर्म इसे राष्ट्र-विशेष मात्र तक ही सीमित समझते हैं। कुछ ऐसे लोग भी हैं जो यह विश्वास करते हैं कि इस भग्वद्-सुचक नबी-ज्ञान का द्वार, काल विशेष के पश्चात्, सदा के लिए बन्द हो चुका है। परन्तु इस्लाम के उदय के साथ ही 'खुदा के अर्थ' की व्यापकता के समान ही खुदा का बोध कराने वाली 'वही' का अर्थ भी बहुत व्यापक हो चुका है। पवित्र कुर्आन, खुदा की 'वही' को न तो काल की संकीर्ण सीमा में बांधता हैं और न ही राष्ट्र विशेष तक इसे सीमित मानता है। कुर्आन शरीफ की यह गंभीर घोषणा है कि सारे राष्ट्रों को अति प्राचीन काल से ही खुदा की 'वही' का प्रकाश अवश्य प्रदान किया गया था। इसका द्वार वर्तमान में भी पहले ही की तरह खुला है और

भविष्य में भी इसी प्रकार खुला रहेगा !* 'वही' की सहायता के बिना कोई राष्ट्र खुदा के निकट नहीं आ सकता। अतः यह बात तर्क-संगत जान पड़ती है कि जिस खुदा ने मनुष्य की शारिरिक आवश्यकताओं की पूर्ति (वर्षा के द्वारा) की है, वह मानवीय आत्मा के पोषण के लिये भी कोई यथोचित प्रयोजन कर दे। इस अवस्था में भी, इस्लाम अन्य धर्मों के समान 'वही' पर आस्था रखता तो है. किन्तु इस संजीवनी आध्यात्मिक विभूति (Favour) को देश-काल की सीमाओं में रखने के पक्ष में नहीं है।

इस्लाम में, खुदा की 'वही' पर ईमान रखने का एक और पहलू भी है और इस दृष्टि-कोण से इस्लाम, विश्व के कुछ दूसरे धर्मों से भिन्न है। इस्लाम, खुदा के देहिक रूप में अवतरित होने का समर्थक नहीं है। 'खुदा का सम्पर्क,' धर्म का परम लक्ष्य है, यह सत्य सर्वमान्य है। खुदा का संपर्क, उसके शरीर धारण करने पर आधारित नहीं हैं, जैसा कि 'अवतरण' के सिद्धान्त माना जाता है। पवित्र कुर्आन के अनुसार भग्वद-संपर्क प्राप्त करने के लिए मनुष्य का ईश्वरोन्मख होना आवश्यक है। अपना आध्यात्मिक विकास करके और भोग-बिलास और तुच्छ वासनाओं से परे होकर ही यह उच्च जीवन प्राप्त करना संभव है। आध्यात्मकता की चरम - सीमा पहुंचा हुआ व्यक्ति (अर्थात् खुदा का नबी) जो संसार को खुदा अस्तित्व का प्रमाण देकर मानो उसके दर्शन करवाता है, वह 'मानवी काया में खुदा' कदापि नहीं हो सकता अपितु

---

*यह सत्य है कि पवित्र कुर्आन ने हज्रत मुहम्मद (सलाम उन पर) को अन्तिम नबी घोषित किया है। 'वही' की प्राप्ति इस सत्य के प्रतिकूल नहीं है क्योंकि पवित्र कुर्आन ही से यह बात मालूम होती हैकि "नबियों के अतिरिक्त" अन्य लोगों को 'वही' दी जाती है।

वस्तुतः मनुष्य ही होता है जिसका व्यक्तित्व, खुदाई गुणों का दर्पण मात्र होता है। वह ऐसा व्यक्ति होता है जो खुदा के प्रेम की अग्नि में अपने आपको लीन कर चुका है। उसका आदर्श जीवन दूसरों को सत्मार्ग की ओर प्रेरित करता है। वह अपने उदाहरण से यह सिद्ध कर देता है कि एक नश्वर मनुष्य किस प्रकार खुदा की समीपता प्राप्त कर सकता है। इसी लिए इस्लाम ने यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया है कि 'वही' के स्वच्छ स्रोत से किसी को वंचित नहीं रखा जा सकता। और यह भी नितान्त सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति इस विभूति को सत्-मार्ग का अनुसरण कर प्राप्त कर सकता है।

मरण के बाद का जवीन

संसार के सब धर्मो में सामान्यतया मृत्यु के पश्चात वाले जीवन पर, किसी न किसी रूप में, विश्वास पाया ही जाता है। अतः इस्लाम पर आस्था का तीसरा सिद्धान्त मौत के उपरान्त वाले जीवन पर ईमान रखना है। यह एक बुनियादी सिद्धान्त है। इस भावी जीवन के सूक्ष्म रहस्य को जिस स्पष्टता से इसलाम ने खोला है वैसा अन्यत्र उपलब्ध नहीं होता। यहूदी धर्म के उदय तक परलोक विषयक जीवन का अर्थ इतना अनिश्चिय था कि इसका कोई उल्लेखनीय ब्योरा 'अहदनामा क़दीम' (Old Testament) में नहीं मिलता। इतना ही नहीं बल्कि एक महत्वपूर्ण यहूदी सम्प्रदाय तो इस प्रकार के जीवन का कट्टरता से निषेध करता था। इस का कारण यह था कि हज़्रत मूसा (Moses) से पूर्व जो नबी हो चुके हैं उन्हें मिलने वाली 'वही' में इस (परलोक) जीवन के विषय में कोई विस्तृत चर्चा नहीं की गई थी। पुनर्जन्म का विचार भी मानव-मन की अपरिपक्व स्थिति के फलस्वरूप उत्पन्न हुआ

क्योंकि इस अवस्था में आध्यात्मिक तथ्यों को भौतिक तथ्य मान लिया गया। इसलाम में, दूसरे धार्मिक सिद्धान्तों के समान ही, परलोक जीवन का विचार भी पूर्णता को प्राप्त कर गया। 'अपने वर्तमान लौकिक जीवन के कर्मो का उत्तर-दायित्व मनुष्य को एक आगामी जीवन में निभाना है' : यही परलोक-जीवन का तात्पर्य है। चरित्रोत्थान के लिए यह एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है, बस इसे उचित रूप में समझना आवश्यक है। पवित्र कुर्आन में निम्नलिखित बातों पर विशेष बल दिया गया है।

मृत्यु के वाद वाला जीवन, पार्थीव जीवन का ही सतत क्रम है।

परलोक की गुत्थी को सुलझाने के मार्ग में, इह-लोक और परलोक के मध्य कल्पित की जाने वाली कालान्तर की खाड़ी एक बहुत बड़ी बाधा है। इसलाम इस बाधा को हटाता है : इसलाम की दृष्टि में परलोक का भावी जीवन वास्तव में लौकिक जीवन ही का क्रम है। इस संदर्भ में पवित्र कुर्आन ने स्पष्ट शब्दों में यह घोषणा की है :–

(१) "हमने (इस पार्थीव जीवन ही में) मनुष्य के कर्मो के परिणामों को उसकी ग्रीवा में बाँध दिया है, और (ये गुप्त परिणाम) हम प्रलय के दिन एक ग्रन्थ के रूप में उपस्थित कर देंगे (17:14)॥" इसी प्रकार : (2) "जो कोई इहलोक में अंधा रहा वह परलोक में भी अंधा ही रहेगा, अपितु वह (सत्, मार्ग से सर्वथा विचलित होगा (17:74)। [इहलोक में अंधा होने का तात्पर्य यह है कि वर्तमान लौकिक जीवन में आत्मा और आध्यात्म की पुष्टि की ओर से निश्चिन्त रहा जाए (अनुवादक)]। एक

अन्य प्रसंग में, इसी विषय में, कुर्आन शरीफ़ इस प्रकार अमृत वृष्टि करता है : "प्रशान्त आत्मे ! अपने पालनहार खुदा की ओर लौट आ। वह तुझ से संतुष्ट और तू उससे संतुष्ट, अतः मेरे भक्तों में आ मिल और मेरे स्वर्ग में प्रवेश कर (79:27)।"

इन श्लोकों में से पहला श्लोक इस बात को स्पष्ट करता है कि महत्वपूर्ण तथ्य जो प्रलय के दिन प्रस्तुत किये जाएँगे, कोई नवीन तथ्य नहीं होंगे अपितु लौकिक जीवन में शारीरिक नेत्रों से ओझल रहने वाली आध्यात्मिक वास्तविकताओं की ही छाप होगी। इस प्रकार मृत्यु के बाद वाला जीवन कोई अभिनव जीवन नहीं है बल्कि लौकिक जीवन का सतत प्रवाह मात्र है, जिस में गुप्त वास्तविकताएँ उद्घाटित कर दी जाएँगी।

शेष दो श्लोक हमें यह बतातें हैं कि नरकीय और स्वर्गीय जीवन, लौकिक जीवन में ही शुरु हो जाते हैं। परलोक में 'अंधेपन' का तात्पर्य 'नरक' है। वे लोग जो इहलोक में अन्धे हैं, परलोक में भी अन्धे होंगे। इस प्रकार यह श्लोक इस बात की व्याख्या करता है कि सांसारिक जीव में 'आध्यात्मिक अन्धता, ही वास्तव में नरक है। यही 'नरक' यहाँ से भावी जीवन तक पहुँच जाता है। इसी प्रकार वह प्राण आत्मा) जिसने लौकिक जीवन ही में आध्यात्मिक शाँति और संतोष प्राप्त कर लिया हो, उसी को मृत्यु के पश्चात् स्वर्ग में प्रवेश मिलता है। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि परलोक का स्वर्ग उसी आध्यात्मिक संतोष और शाँति का ही क्रमिक प्रवाह है जिसका स्वाद हमें अध्यात्मिक रूप में (Spiritually) इसी संसार में मिल चुका है। अतः यह बात स्पष्ट है कि कुर्आन शरीफ़ के अनुसार परलोक का आगामी जीवन

वर्तमान जीवन का ही सतत क्रम है और यह भी स्पष्ट है कि मृत्यु इस जीवन (भावी जीवन) के मार्ग में बाधा नहीं डालती अपितु एक ही श्रृंखला की मध्यवर्ती कड़ी है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि मृत्यु ही वह द्वार है जो इस जीवन की गूढ़ातिगूढ़ वास्तविकताओं को खोल कर रख देता है।

मरण के उपरान्त की अवस्था, इहलोक के आध्यात्मिक जीवन ही का प्रतिबिम्ब है।

इस्लाम के उदय के साथ ही परलोक विषयक एक बड़ा महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाश में आया है। ईसाई धर्म की शिक्षा में शारीरिक और आध्यात्मिक बातों को एक साथ समाविष्ट कर दिया गया है। अतः जिस प्रकार रोना धोना, चीख पुकार, दांत पीसना और धधकती हुई अग्नि दुष्टों की सजाएँ बताई गई हैं उसी श्वास में 'स्वर्ग का साम्राज्य,' 'स्वर्ग के खज़ाने' और 'स्थाई जीवन'— ये अच्छे लोगों के उपहार हैं। परन्तु पहले (नरकीय) या दूसरे (स्वर्गीय) जीवन के स्रोतों (Sources) का तनिक भी संकेत नहीं मिलता। इसके विपरीत, पवित्र कुर्आन ने यह बात बिल्कुल स्पष्ट कर दी है कि भावी जीवन, वर्तमान जीवन ही का संगोपांग प्रतिबिम्ब है। वर्तमान जीवन में कर्मों और आस्थाओं की अच्छाइयाँ और बुराइयाँ मनुष्य के भीतर ही निहित रहती हैं और इनके घातक अथवा सुखद परिणाम गुप्त रूप ही में उसे प्रभावित कर पाते हैं। परन्तु आगामी जीवन में ये सब बातें स्थूल रूप में देखी जा सकेंगी। इह-लोक में हमरे कर्म और उनके प्रभाव जो भी स्वरूप धारण करते हैं वह मनुष्य को दिखाई नहीं देता। परन्तु आगामी जीवन में इसे स्पष्टतया देखा जा सकेगा। अतः भावी

जीवन के सुख-दुख वस्तुतः आध्यात्मिक होते हुए भी साधारण आँखों से छिपे नहीं रहेंगे, जिस तरह वर्तमान जीवन में आध्यात्मिक तथ्यों पर आवरण पड़ा हुआ है। इसी लिए एक ओर परलोक की विभूतियों को लौकिक नामों से पुकारा गया है, यह बात इसी तथ्य का प्रमाण देती है कि यह विभूतियाँ ऐसी होंगी जो आँखों से देखी जा सकेंगी, दूसरी ओर इन्हीं बातों के विषय में कहा गया है कि ये ऐसी विभूतियां हैं कि :

'उन्हें न तो किसी आँख ने देखा है, न किसी कान ने सुना है और न किसी मन में इन का विचार तक आ सका है।'

आगामी जीवन की नेमतों (विभूतियों) का हज़्रत मुहम्मद (सलाम उन पर) की यह हदीस (वाणी) वास्तव में पवित्र कुर्आन के निम्नलिखित श्लोक की व्याख्या करती है :

'कोई व्यक्ति उन विभूतियों और आनन्दों को नहीं जानता जो कि उस के लिए गुप्त रूप में (सुरक्षित) हैं (32:17)।'

पवित्र कुर्आन के निम्नलिखित श्लोक का, भले ही, साधारणतया गलत अर्थ समझा जाता हो, परन्तु इसके अधीन यह कहना कि स्वर्ग की विभूतियाँ पूर्णतया लौकिक वस्तुओं की तरह हैं, उचित नहीं है। वह श्लोक इस प्रकार है :—

"और आस्था रखने वालों और सत्कर्म करने वालों को शुभ संदेश सुना दो कि उनके लिए उद्यान हैं जिनके नीचे सरिताएँ प्रवाहित हैं, जब कभी उनके लिए इन फलों में से प्रयोजन किया जाएगा तो वे कहेंगे : ये वही फल हैं जो हमें (इस से) पहले चखाए गए थे। और उन्हें इसी के समान (प्रयोजन) दिया जाएगा (2:2)।"

यहाँ, नेक लोग जिन फलों के विषय में कहते हैं कि हम ने इन्हें लौकिक जीवन में चखा है, ये सांसारिक वृक्षों के फल अथवा भौतिक जीवन की वस्तुएँ नही हो सकतीं। इस आयात में वस्तुतः इस बात का उल्लेख है कि आस्तकों और सत्कर्म करने वालों की आस्था और सत्कर्मो द्वारा ही उनका निजि स्वर्ग निर्मित होता है। उन के अच्छे कर्म भावी जीवन में फल बनकर दिखाई देंगे। यही वे फल हैं जिनका आध्यात्मिक स्वाद उन्हें इहलोक में ही चखा दिया जाता है। स्वर्ग निवासी परलोक में, इनही फलों का स्थूल रूप में उपभोग करेंगे। इसी अर्थ को स्पष्ट करने वाली पवित्र कुअनि की एक आयत (श्लोक) यह भी है :

'उस दिन तुम आस्तिक नर और अस्तिक नारियों को देखोगे कि उन की कान्ति, उन के समक्ष और उनके दाहिनी और दौड़ रही होगी (57:12)'। इस से यह प्रमाणित होता है कि आस्था ईमान की वह ज्योति जिससे आस्तिकों ने इहलोक में सत्-मार्ग देखा था, और जो लौकिक जीवन में केवल आध्यात्म के नेत्रों से ही देखी जा सकती थी, वही ज्योति प्रलय के दिन उनके सामने जाती हुई स्पष्टतया देखी जा सकेगी।

स्वर्ग की विभूतियों के समान ही नरक की सज़ाएँ भी वर्तमान जीवन के अध्यात्मिक क्लेशों का प्रतिबिम्ब हैं। नरक के विषय में कहा गया है कि वह ऐसी जगह है जहाँ कोई जिएगा न मरेगा (20:76)। इस संदर्भ में यह बात ध्यान देने योग्य है कि कुर्आन शरीफ की शब्दावलि में पथ-भ्रष्ट लोगों और दुष्टों को मृत और निर्जीव कहा गया है और सत्कर्म निष्ठों और अच्छे लोगों को जीवित माना गया है। इस में यह रहस्य है कि वे लोग जो खुदा से अपरिचित हैं, उनके जीवन

का एक मात्र लक्ष्य भौतिक वासनाओं की पूर्ति है, ऐसे ही लोगों के जीवन-स्रोत देहान्त के साथ सर्वथा सूख जाते हैं। आध्यात्मिक भोज में से उनके लिए कुछ भी सुरक्षित नहीं है। इस प्रकार वास्तविक जीवन से वे एकदम वंचित हैं। उन्हें आगामी जीवन में; लौकिक जीवन के बुरे कामों के दुष्परिणामों का रसास्वादन करवाने के लिए, मरने के बाद पुनः जाग्रत किया जाएगा।

फरिश्तों पर आस्था और इस का महत्व

एक मुसलमान की आस्था के तीन बुनियादी सिद्धान्तों का मैं ने सार रूप में वर्णन करने का प्रयत्न किया है। परन्तु मैं एक और बात बताना आवश्यक समझता हूँ। वह यह है कि फरिश्तों (Angels) पर आस्था की बात भी "अदृश्य" पर विश्वास के अन्तर्गत ही है। विश्व के अनेक धर्मों में इस पर सामन्यतया आस्था पाई जाती है किन्तु उतने स्पष्ट रूप में इसे मान्यता नहीं दी जाती जितनी कि उपरोक्त तीन सिद्धान्तों को दी जाती है। इसलिए यहाँ इस सम्बन्ध में कुछ संकेत करना उचित जान पड़ता है। भौतिक जगत में यह कानून सर्वमान्य है कि मनुष्य की अन्तर्भूत क्षमता और ज्ञानेन्द्रियों के होते हुए भी पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति के लिए हमें बाह्य साधनों की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरणार्थ - वस्तुएँ देखने के लिए हमें आँखें दी गई हैं, और ये उन्हें देखती अवश्य हैं किन्तु बाहरी प्रकाश के बिना देख नहीं पाती। कान, ध्वनियों को सुनता अवश्य है परन्तु वायु के द्वारा ही। इसस स्पष्ट होता है कि वास्तव में मनुष्य को आन्त्रिक क्षमताओं के अतिरिक्त कुछ बाहिरी साधनों की जरूरत अवश्य पड़ती है। इसी प्रकार आध्यात्म की दुनिया में भी यही नियम दृष्टि-गोचर होता है। जिस प्रकार भौतिक जगत में बाह्य प्रसाधनों की सहायता के

बिना, केवल अन्तर्भूत क्षमताओं से कोई ध्येय प्राप्त होना असम्भव है; इसी प्रकार हमारी आध्यात्मिक शक्तियां मात्र हम से अच्छाई या बुराई नहीं करवातीं, बल्कि यहाँ भी कुछ मध्यस्थ साधन अवश्य विद्यमान हैं, जो हमारी आन्त्रिक शक्तियों से सर्वथा भिन्न है। ये शक्तियां ही हम से 'कु' या 'सु' करवाती हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि मानव-प्रकृति में दो प्रकार के आकर्षण रखे गए हैं: (१) अच्छे कर्म करने का आकर्षण अथवा पुण्य के क्षेत्र में अग्रसर करने वाली प्रवृत्ति। (२) दुष्कर्म की ओर प्रेरित करने वाली शक्ति अथवा पाशविक मनोवृत्ति। इन आकर्षणों को कार्यान्वित करने के 'बाहिरी प्रसाधनों' की आवश्यकता होती है जैसे कि मनुष्य की दैहिक शक्तियों के लिये इस प्रकार के मध्यवर्ती साधन अपेक्षित हैं। वे बाह्य प्रसाधन जो हमें सत्कर्मों के लिये प्रेरित करते हैं, उन्हें "फरिश्तों' (Angels) के नाम से पुकारा जाता है। और वे बाहिरी प्रसाधन जो हमें 'बुराई' के लिये प्रेरित करते हैं उन्हें 'शैतान' (Devil) कहा जाता है। यदि हम सत्कर्म के आकर्षणों से प्रभावित होते हैं तो हम 'पुनीत-आत्मा' (Holy Spirit) के अनुगामी हैं। इसके विपरीत यदि हम दुष्कर्म के आकर्षण से प्रभावित होते हैं। तो मानो हम 'शैतान' का अनुसरण कर रहे हैं। अतः 'फरिश्तों पर ईमान' का अर्थ यह है कि हमें सत्कर्म की प्रेरणा से ही प्रभावित होना चाहिए जो कि हमारे अन्तर्मन में निहित है।

आस्था (ईमान) का महत्व

उपरोक्त विवरण से एक मुसलमान के लिए 'फरिश्तों पर ईमान' का महत्व भी मालूम होता है अच्छी 'आस्था' का स्पष्टिकरण भी हो जाता है। इस्लाम में 'ईमान' (आस्था) का तात्पर्य किसी बात की सच्चाई पर विश्वास प्रदर्शन मात्र ही नहीं है अपितु किसी बात

को आधार मान कर उसके अनुसार कर्म करने का नाम ही ईमान है। जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया गया, शैतान के आस्तित्व की बात उतनी ही सत्य है जितनी कि फ़रिश्तों के आस्तित्व की बात। फरिश्तों पर ईमान लाने की बात अनेक बार दुहराई गई है जो कि एक मुसलमान के ईमान का एक भाग है। किन्तु शैतानों पर ईमान रखना कदापि आवश्यक नहीं है। इसीलिए इस का उल्लेख नहीं मिलता। दोनों बातें समान रूप से सत्य हैं। पवित्र कुर्आन में अनेक बार शैतानों के बहकाने और पथ भृष्ट करने की बात कही गई है। इस पवित्र ग्रन्थ के अनुसार फ़रिश्तों पर आस्था रखना अनिवार्य है, किन्तु शैतानों पर ईमान लाना आवश्यक नहीं है। यदि 'फरिश्तों पर आस्था,' उनके आस्तित्व को मान लेने की समानार्थी होती तो शैतानों पर आस्था भी उतनी आवश्यक होती परन्तु ऐसा नहीं है। वास्तव में बात यह है कि मनुष्य के लिए 'सत्य की निमंत्रक शक्ति' की पुकार को सुनना और उसके अनुसार कार्य करना आवश्यक है, किन्तु 'बुराई की निमंत्रक शक्ति' की पुकार का सुनना और इसका पालन करना आवश्यक नही है। पहली शक्ति हमें सत्कर्म के लिए प्रेरित करती है, इसी लिए फरिश्तों पर आस्था रखना अनिवार्य है। इसके विपरीत दूसरी शक्ति 'अधम की पुकार' है, इसी लिये इस पर आस्था रखना न तो अनिवार्य है और न वाँछनीय है। पहली शक्ति हमें 'कर्म की आधार शिला प्रदान करती है। इस लिए इस पर ईमान रखना वाँछनीय और अनिवार्य है। इसके विपरीत, पवित्र कुर्आन ने शैतानों का निषेध करने की आज्ञा दी है : "अतः जो कोई, शैतान का निषेध करता और अल्लाह पर आस्था रखता है, निःसंदेह वह एक मज़बूत (दृढ़) सहारा प्राप्त करता है (2:257)। इस प्रकार पवित्र कुआन द्वारा प्रस्तुत किए गये आस्था के उपरोक्त सिद्धान्त ऐसे सिद्धांत हैं जो वास्तव में

कर्मशीलता के लिए आधार प्रस्तुत करते हैं। इसके अतिरिक्त इस्लाम में 'आस्था' का कोई अन्य रूप नहीं है।

कर्म के सिद्धान्त

इस्लाम के सैद्धान्तिक नियमों का उल्लेख करने के बाद हम इसके 'कर्म' अथवा 'व्यवहार विषयक नियमों का अवलोकन करते हैं। मैं यह बात पहले ही स्पष्ट कर चुका हूँ कि इस्लाम में कर्मों को धर्म का उतना ही मौलिक संयोजनात्मक भाग माना गया है जितना कि 'आस्था' को। इस दृष्टि से' इस्लाम का स्थान व्यवहारिक पहलू' का सर्वथा निषेध करने वाले धर्मों और रूढि-ग्रस्त धर्मों के बीचों-बीच हैं। इस्लाम, मनुष्य की क्षमताओं को विकसित करने के लिए सर्व सामान्य विधियां बतलाता है और व्यक्ति की निर्णयकुशलता के लिए काफी स्वतंत्रता प्रधान करता है।

कोई धर्म हो, सुव्यवस्थित 'व्यवहारिकता' के बिना, आदर्शवाद (Idealism) मात्र हो कर रह जाता है। ऐसा धर्म मनुष्य को कर्म - मार्ग पर चालित नहीं कर सकता। इस्लाम के तत्व, जो कि अल्लाह-विषयक कर्तव्यों और मानव-विषयक कर्तव्यों पर आधारित हैं; वास्तव में मानव-प्रकृति की गम्भीर जानकारी पर आश्रित हैं। और यह जानकारी खुदा के अतिरिक्त किसी और को प्राप्त नहीं है जो कि इसका सृष्टा है। इन तत्वों का संबंध मानव के सर्वांगीन विकास से है। इस प्रकार ये आश्चर्य जनक रूप में विभिन्न राष्ट्रों की आवश्यकताओं के अनुकूल हैं।

आराधना

उपरोक्त पंक्तियों में जो आयत (श्लोक) मैं ने प्रस्तुत की

है, वास्तव में वही इस्लाम की शिक्षा का केन्द्र बिन्दू विद्यमान है। व्यापक अर्थ की दृष्टि से कह सकते हैं कि इस श्लोक में कर्म के जिन दो सिद्धान्तों का उल्लेख है, इसमें मानव के 'खुदा से संबन्धित' कर्तव्य (हकूक-अल्लाह) और मनुष्यों के पारस्परिक कर्तव्य हकूकुल इबाद का समावेश हैं। आराधना, वास्तव में हृदय के समस्त उद्‌गारों को अल्लाह के सामने पेश करने की क्रिया का नाम है। यह विनीत आत्मा की प्रार्थना है, विनति है। यह खुदा के सामने आत्मा की शुद्ध अभिलाशाओं का आदर पूर्ण ब्योरा है। अन्य धार्मिक विचारों के समान, इस्लाम में 'आराधना' के विचार को भी विकास की चरम सीमा तक पहुंचा दिया है। पवित्र कुर्आण के अनुसार, आराधना, मन को पवित्र करने का एक साधन है जिससे 'ईश्वर - प्राप्त' का मार्ग सुगम हो जाता है। इस सम्बन्ध में कुर्आण शरीफ की गम्भीर घोषणा इस प्रकार है :—

(हे मुहम्मद) जो कुछ तुम पर किताब (कुर्आन) से अवतरित किया गया है उसे पढकर सुनाओ और निरंतर आराधना (नमाज) करते रहो क्योंकि निःसन्देह, नमाज, अश्लीलताओं और दुष्कर्मों से रोकती है और अल्लाह का गुणगान वास्तव में एक महत्वशाली क्रिया है (29 : 45)। इसी इस्लाम ने आराधना को मानव के चरित्रोत्थान के लिये अनिवार्य क्रिया का स्थान दिया है। ऐसी आराधना जो रूढ़िमात्र हो और एक निर्जीव-नीरस प्रथा के रूप में एक रीति के समान प्रचलित हो, इसका ईस्लाम में कोई स्थान नहीं है। ऐसी आराधना की निन्दा निम्नलिखित आयत में की गई है : (ऐसे) आराधकों (नमाजियों) के लिए बुराई है जो अपनी नमाजों में बेपरवाई (आलसीपन) करते हैं और जो आडम्बर मात्र करने वाले हैं (107 : 4-6)।

उपवास (रोज़ा)

आत्मा की पवित्रता के लिये पवित्र कुर्आन के अनुसार उपवास करना अनिवार्य है। किन्तु उपवास का अर्थ खाना पीना मात्र बन्द कर देना नहीं अपितु (आँख, कान, हाथ, पैर, मन, मस्तिष्क आदि समस्त अवयवों के दुरुपयोग से बचते हुए— [अनुवादक] सारी बुराइयों से बचने का नाम 'उपवास' (रोज़ा) है। खान पीने से दूर रहने की क्रिया वास्तव में इस बात का आभास करवाने के लिए है कि जिस स्थति में मनुष्य अल्लाह के आदेश का पालन करते हुए खान-पान जैसी जाएज़ (उचित) (Lawful) आवश्यकताओं को परे रख सकता है तो फिर उन बुराइयों से बचना कितना आवश्यक है जिनसे दूर रहने की आज्ञा दी गई है। इस उपवास का उद्देश्य मनुष्य के चरित्र की उन्नति है। निम्नलिखित आयत इस बात को स्पष्ट कर देती है :—

'रोज़े तुम्हारे लिए अनिवार्य किए गए हैं ...... ताकि तुम बुराई से बच सको (2 : 183)।

हज्ज

मक्का शरीफ की पवित्र नगरी का 'हज्ज' आध्यात्मिक विकास का अन्तिम चरण है। इसमें मनुष्य के समस्त निम्न भौतिक संबंध टूट जाते हैं और वह आत्म-समर्पण करते हुए, खुदा की इच्छा के आधीन हो जाता है। वह खुदा के निमित्त अपनी व्यक्तिगत अभिलाषाओं और कामनाओं को त्याग कर देता है। सच्चा प्रेमी अपने प्रिय के लिये मन और आत्मा की बलि देकर बड़ा अलौकिक संतोष पाता है। खुदा के घर 'का'बा' की परिक्रमा। इसी (आन्त्रिक)

प्रेम) की परिचायक है। एक हाजी, 'का'बे' शरीफ के 'तवाफ़' (परिक्रमा) की 'बाह्य-क्रिया के द्वारा इस बात का परिचय देता है कि उसके मन में अल्लाह के प्रेम की ज्योत जाग चुकी है। इसी लिए एक सच्चे प्रेमी के समान वह अपने प्रिय (अल्लाह) के घर के आस पास चक्कर (तवाफ) लगा रहा है: इसे से यह प्रमाणित होता है कि उसने 'स्वेच्छा' को अपने प्रिय स्वामी 'अल्लाह' की इच्छा के आधीन कर दिया है, अपनी तुच्छ कामनाओं की बलि दे दी है।

इस्लाम की यह सारी शिक्षाएँ मनुष्य के चरित्र को शाश्वत करने के लिए हैं। यहाँ कोई ऐसा सिद्धान्त नहीं मिलता जो व्यर्थ का 'आडम्बर' हो: इसकी शिक्षा का उद्देश्य मन की पवित्रता है। इस प्रकार पवित्र हो कर मनुष्य, 'पवित्रता के आदि-स्रोत' खुदा से घनिष्ट संबन्ध स्थापित कर लेता है।

मनुष्य के पारस्परिक कर्तव्य

इस्लाम की शिक्षा का दूसरा भाग 'मनुष्य के मानवीय कर्तव्यों से सम्बन्ध रखता है *यह बात याद रखनी चाहिए कि इन दोनों का एक दूसरे से निकट का संबन्ध है। मनुष्य का चरित्रोत्थान, पवित्र कुआन का परम उद्देश्य है। इसी बात का वर्णन पूरे कुआन में किया गया है। इस्लामी शिक्षा का उद्देश्य मानव जाति को धीरे-धीरे 'सुशीलता' की चोटी तक उठाना है। 'वह व्यक्ति जो अपने बन्धु के अधिकार का अनादर करता है, वह खुदा के एकत्व' पर विश्वास नहीं रखता।' (अर्थात् वह पूरा

*इस्लामी-शिक्षा के 'प्रथम' भाग 'अल्लाह के प्रति मनुष्य के कर्तव्य" की समीक्षा; 'आराधना रोजा और हज' के अन्तर्गत की जा चुकी है। [अनुवादक]

मुसलमान नहीं है। —अनुवादक) यह शिक्षा वास्तव में स्वर्ण अक्षरों में लिखे जाने योग्य है।

इस्लामी भाईचारा

इस्लाम ने सब प्रकार के भेदभावों को मिटा कर रख दिया है। इस विषय में पवित्र कुर्आन की घोषणा इस प्रकार है: "(हे मानव समाज) निःसंदेह अल्लाह के पास, तुम में से वही व्यक्ति सर्वोत्तम है जो तुम मे सब से अधिक सत्कर्मी है" (49:13)। इस घोषणा में सब प्रकार की ऊँच - नीच की भावनाओं को समाप्त कर दिया है चाहे उनकी नींव जातिवाद पर हो या समाजवाद पर। पवित्र कुर्आन के अनुसार समस्त मानव-जाति एक ही परिवार है। निम्नलिखित आयत यही बात बतलाती है: 'हे मनुष्यों! निःसंदेह हम ने तुम सब को एक ही नर-नारी से उत्पन्न किया है और तुम्हारे समुदाय और परिवार बनाए हैं ताकि तुम परस्पर एक दूसरे को पहचान सको, निःसंदेह अल्लाह की दृष्टि में, तुम में से वही व्यक्ति सर्वोत्तम है जो सबसे अधिक कर्तव्यपरायण है" (49:13)। इस प्रकार इस्लाम एक विशाल (वृहत्तर) भाई चारे की नींव रखता है जिस में सब नर नारी चाहे वे किसी समुदाय, राष्ट्र अथवा जाति से संबंध रखते हों, चाहे जो व्यवसाय अपनाए हुए हों, चाहे किसी भी सामाजिक स्तर पर हों, धनवान हों या निर्धन, सबको समान अधिकार प्राप्त हैं। यह एक ऐसा भाई-चारा है जिसमें कोई किसी के अधिकारों का तिरस्कार नहीं कर सकता। इस भाई चारे में सम्मिलित सब लोगों के लिए आवश्यक है कि वे परस्पर एक ही परिवार के सदस्यों के समान रहें: सेवकों को वही वस्त्र और भोजन दिया जाए जैसा कि उनका मालिक प्रयोग करता है। उन्हें तुच्छ और निम्न समझना उचित

नहीं है। कुर्श्रानशरीफ की एक महत्वपूर्ण घोषणा इस प्रकार हैं : 'तुम्हारी पत्नियों को तुम्हारे ऊपर उसी प्रकार के ग्रधिकार प्राप्त हैं जैसे कि तुम्हें उनके ऊपर ग्रधिकार हैं। (2:228)' जाति, व्यवसाय ग्रथवा लिंग के ग्राधार पर किसी को उसके ग्रधिकारों से वंचित न किया जाय। यह वैभवशाली भाई-चारा नाममात्र का ग्राडम्बर नहीं था, ग्रपितु हज्रत नबी करीम (सलाम उन पर) ग्रौर ग्रापके समकालीन मित्रों के उज्वल दृष्टाँतों द्वारा एक वास्तविक ग्रौर गतिमान शक्ति प्रमाणित हुई। हज्रत मुहम्मद (सलाम उन पर) के निम्नलिखित प्रवचन (हदीस) में भाईचारे के विषय में बड़ा सख्त नियम दिया गया है :— 'तुम में से कोई व्यक्ति उस समय तक मोमिन (ग्रास्तिक) नहीं हो सकता जब तक कि वह ग्रपने बन्धु के लिए वही बात पसंद करे जो स्वयं ग्रपने लिऐ पसन्द करता है'।

सत्ता का सम्मान

परन्तु ग्रधिकारों की इस प्रकार समानता स्थापित करते हुए भी; इस्लाम, सत्ता के सम्मान पर बहुत ग्रधिक बल देता है। मनुष्य का घर ही ऐसी पाठशाला है जहाँ नैतिक-जीवन का पहला पाठ ग्रारम्भ होता है। इसी लिये पवित्र कुर्ग्रान ने माता पिता के ग्राज्ञापालन पर सब से ग्रधिक बल दिया है। पवित्र कुर्ग्रान की एक महत्वपूर्ण घोषणा इस प्रकार है :— "ग्रौर तुम्हारे पालनहार ग्रल्लाह ने ग्रादेश दिया है कि तुम उस के ग्रतिरिक्त दूसरों की ग्राराधना नहीं करोगे : ग्रौर यह कि तुम माता-पिता के साथ सौजन्य का व्यवहार करो; यदि उनमें से कोई एक ग्रथवा दोनों, तुम्हारे सामने वृद्धावस्था को पहुंच जाए तो (देखो) उन्हें 'उफ' (ग्रथवा ग्ररे) तक न कहना न उनको झिड़को, ग्रौर उन्हें सविनय संबोधित किया करो। ग्रौर उनके सम्मुख श्रद्धा के साथ ग्रपनी भुजाग्रों को झुकाए रखो ग्रौर

(ख़ुदा से प्रार्थना करते हुए) कहा करो : 'हे पालनहार ख़ुदा ! उन दोनों पर दया कर जिस प्रकार मेरे छोटेपन में उन्होंने मेरा पालन पोषण किया था (17:23–24)।'

एक दूसरे अवसर पर पवित्र कुर्आन ने यह आदेश दिया है कि यदि वे (माता पिता) ख़ुदा के अतिरिक्त दूसरों की अ राधना करने पर तुम्हें बाध्य करें तो इस अवस्था में उनकी आज्ञा का पालन न किया जाय। माता पिता के निमित्त यह आदरभाव ही वह स्रोत है जिस से सारी सत्ताओं के प्रति उच्च नैतिक सम्मान के विचार उत्पन्न होते हैं। पवित्र कुर्आन का स्पष्ट आदेश है : अल्लाह और उसके रसूल का आज्ञापालन करो और तुम में से जो सत्ताधारी हों (उनकी आज्ञा का पालन करो — अनुवादक)। (4:59) सत्ताधारियों में केवल देश के शासक ही सम्मिलित नहीं हैं अपितु ऐसे सब अधिकारी सम्मिलित हैं जिन्हें किसी न प्रमाण से अधिकार (Authority) सौंपे गए हैं। इसी सत्य की ओर निम्नलिखित हदीस में भी संकेत किया गया है। "तुम में हरएक शासक है तुम में से हरएक मनुष्य से उन (शासितों) के विषय में पूछताछ अवश्य की जायेगी जिनके ऊपर उसे अधिकारी बनाया गया था।" हज़्रत नबी करीम (सलाम उन पर) की हदीस मे यह आदेश भी मिलता है : 'यदि किसी हब्शी (Negro) गुलाम (Slave) को भी अधिकार सौंपा जाए।' तो उसकी आज्ञा का पालन किया जाए।' परन्तु, अगर, अगर कोई अधिकारी कुर्आन और सुन्नत (हज़्रत नबी (सलाम) की परंपरागत कर्मावली) के विरुद्ध आज्ञा दे तो ऐसी हालत में उस की अवज्ञा की जाए। यदि मां-बाप, ख़ुदा के अतिरिक्त दूसरों की उपासना की आज्ञा दें तो उनकी आज्ञा का पालन नहीं करना चाहिए। इस प्रकार जिस अधिकारी की आज्ञा ख़ुदा के स्पष्ट आदेश और सुन्नत के प्रतिकूल हो उस का निषेध आवश्यक है।

इस्लाम के प्रथम खलीफ़ा (Viceroy), हज़्रत अबूबक्र (सलाम) ने अधिकार संभालने से पहले जो विज्ञापन प्रसारित किया था, वह स्वर्ण अक्षरों में लिखे जाने योग्य है: '(ऐ लोगों!) यदि मैं ठीक ठीक काम करूँ तो मेरी सहायता करो। परन्तु अगर मैं गलती करूँ तो मेरी गलती दूर करके मुझे दुरुस्त कर दो। मेरी आज्ञाओं का पालन उसी समय तक करते रहो, जब तक कि मैं अल्लाह और उस के रसूल का आज्ञापालन करता रहूँ। परन्तु अगर मैं खुदा और रसूल की अवज्ञा करने लगूँ तो मेरी आज्ञा का पालन न करना.'

हज़्रत नबी करीम (सलाम) की एक हदीस इस प्रकार है: सर्वोत्तम कर्म यह है कि किसी अत्याचारी शासक के सम्मुख निडर होकर सत्य का आग्रह किया जाए।'

जकात (Charity)

इस प्रकार अधिकारों की समानता और सत्ता का सम्मान इसलामी समाज के मौलिक सिद्धांत हैं। स्थानाभाव के कारण मैं, उन समस्त वैभवशाली संस्थाओं का पूरा ब्योरा नहीं दे सकता, जो इस (सिद्धान्त) के आधार पर निर्मित हुई हैं। मैं, इसलामी भाईचारे की एक और विशेषता का वर्णन करना चाहता हूँ।

संसार के सभी धर्म, जन-कल्यान के हेतु दान (जकात) और भिक्षा देने की शिक्षा देते हैं। परन्तु इस्लाम ही एकमात्र धर्म है जिसने इसे अनिवार्य किया है। इस्लाम में प्रवेश करने वाले को जकात देनी ही पड़ती है। इस में एक धनवान के लिए उस समय तक कोई स्थान नहीं जब तक कि वह दरिद्रों के लिए अपने माल में से एक भाग दान करना स्वीकार न कर ले। इसमें संदेह नहीं है

कि धनी व्यक्ति को इस आदेश द्वारा किसी विकटतम परिस्थिति में पड़ने के लिए बाध्य नहीं किया जाता अपितु उसे एक प्रयोगात्मक जांच से गुज़रना पड़ता है; जिसके कारण न केवल यह कि वह अपने दुर्भाग्यशाली गरीब बंधुओं के धरास्थल पर आ खडा होता है, अपितु उसे एक 'कर' भी चुकाना पड़ता है—ऐसा 'कर' जो धनियों पर गरीबों के कल्याण की दृष्टि से लगाया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति जिसके पास एक विशेष सीमा से ऊपर माल हो, उसे उसमें से एक भाग अलग रख देना चाहिए। इस प्रकार जो धन एकत्र हो जाए इसे इस्लामी सरकार या इमाम सुरक्षित रखे इस संचित पूँजी में से निम्नलिखित उद्देशों पर खर्च किया जाए : 'भिक्षा (ज़कात) की रकम केवल निर्धनों, आवश्यकता ग्रस्तों और उन लोगो के लिए है जो इसके लिए (ज़कात जमा करने) नियुक्त किए जाएँ, और ऐसे लोगों के लिये जिन के मन 'सत्य' (इस्लाम) से आकृष्ट हुए हों (अर्थात् जिन्होने इस्लाम स्वीकार किया है), और बन्दियों को छुडाने और ऋणियों को ऋण-मुक्त करने और 'अल्लाह के मार्ग' में और यात्रियों के लिए।' (9 : 60)

'अल्लाह के मार्ग' का तात्पर्य प्रत्येक 'जनहित-कारी' कर्म से है। पवित्र कुर्आन ने जकात दान अनिवार्य किया है और उसपर उतना ही बल दिया है जितना कि आराधना (नमाज) पर (जकात के अतिरिक्त) पवित्र कुर्आन ने सामान्य दान-क्रियाओ पर भी बहुत ज्यादा जोर दिया है। संसार से दासता (Slavery) की प्रथा को समाप्त करने के लिए दासों (गुलामों) को मुक्त करने की आज्ञा दी गई है। इसके अतिरिक्त गरीबों को भोज देना भी समान रूप से पुण्यकर्म के अन्तर्गत बताया गया है। उदाहरणार्थ : 'और तुम्हें कौन समझाएँ कि बडा टीला क्या है ? इस का तात्पर्य बन्दी की मुक्ति अथवा अकाल के दिन सगे संबन्धी (निकटवर्ती) अनाथ

को अथवा धूल में अटे दीन दरिद्र को भोज देना है। 90:12-16

नैतिक शिक्षा की व्यापक

पवित्र कुर्आन का सजीव संदेश वास्तव में राष्ट्र-विशेष अथवा काल विशेष ही के लिये नहीं है बल्कि इस का क्षेत्र मानव-समाज के समान ही विस्तृत है। यह एक ऐसा ग्रंथ है जो जीवन के समस्त क्षेत्रों में लोगों का मार्गदर्शन करता है —एक अनपढ़ असभ्य व्यक्ति का भी और एक सुशिक्षित बुद्धिमान दार्शनिक का भी, एक सांसारिक व्यक्ति का और एक एकान्त वासी का भी, एक धनवान का और एक दरिद्र का भी। इसी लिए जीवनयापन के संबंध में विभिन्न नियम प्रस्तुत करके, यह ग्रंथ प्रत्येक व्यक्ति से इस बात का अनुरोध करता कि वह अपनी परिस्थिति विशेष पर लागू होने वाले नियमों का पालन करें। यदि एक ओर यह असभ्य लोगों को उन्नत करने के नियम बताकर उन्हें सदाचार के सर्वसामान्य तरीके बताता है तो दूसरी ओर सुसभ्य लोगों की नैतिक और अध्यात्मिक उन्नति का दायित्व भी लेता है। इसमें संदेह नहीं है कि मानव की प्रगति के लिए आदर्श नैतिक शिक्षा अपेक्षित है। किन्तु इस से वही लोग लाभ उठा सकते हैं जो इस उच्च आदर्श के महत्व को समझते हैं। परन्तु कोई राष्ट्र या समाज चाहे वह कितना ही सुसभ्य क्यों न हो, उसके सारे सदस्य इस उच्च (नैतिक और आध्यात्मिक) श्रेणी के नहीं होते। इसी लिए पवित्र कुर्आन में ऐसी समस्त अवस्थाओं के मार्गदर्शन के लिये नियम विद्यमान हैं जिन (अवस्थाओं) से प्रायः मनुष्य को प्रगति करते हुए गुज़रना पड़ता है अथात् अवनत असभ्य दशा से उन्नत आध्यात्मिक दशा तक इस पवित्र ग्रन्थ की 'अलौकिक कांति' हमारा साथ देती है। इस प्रकार इस में मनुष्य के समस्त कार्य क्लाप सम्मिलित हैं और इस में

मनुष्य की सारी इन्द्रियों के विकास की क्षमता है। इसका मिशन निसर्ग द्वारा मनुष्य के भीतर रखे गए प्रत्येक गुण को प्रस्फुटित करना है। इस्लाम मानवीय गुणों के अंध प्रदशन के पक्ष में नही है बल्कि 'उचित अवसर' की शर्त लगाता है। इस्लाम नम्रता दिखाने और साहस का प्रदर्शन करने की मांग करता अवश्य है किन्तु इन के उचित अवसरों पर ही। इसलाम 'क्षमा' करने की शिक्षा देता तो है परन्तु अगर दोषी को उसके दोष कठोरता के कारण सज़ा देना आवश्यक जान पड़े तो उसे उचित सज़ा देना ही युक्ति संगत है। पवित्र कुर्आन की आज्ञा इस प्रकार है: 'क्षमा करो यदि तुम्हें ऐसा जान पड़े कि, इससे कोई अच्छाई उत्पन्न हो सकती है'। इसी प्रकार अत्यधिक प्रतिकूल परिस्थितियों में भी उच्च नैतिक गुणों का ही प्रदर्शन करना चाहिए। ईमानदारी के फलस्वरूप यदि कठिनाइयों में भी घिरना पडे तथापि ईमानदार ही बने रहो यदि अपने निकटवर्ती लोगों और संबन्धियों के विरुद्ध भी सच्ची बात कहनी पड़े तो अवश्य कहनी चाहिए। व्यक्तिगत लाभ की बलि देकर भी सहनुभूति करो। कठिन से कठिन विपत्तियों में धीरज न हारो बल्कि संयमी बने रहो। तुम्हारे साथ जिन का व्यवहार बुरा हो उनसे सौजन्य का बर्ताव करो। इसके अतिरिक्त पवित्र कुर्आन 'मध्यम मार्ग' पर चलने की शिक्षा देता है। खुदा ने मनुष्य में जो उत्तमोत्तम गुण रखे हैं उनका दैनिक व्यवहार में लाना आवश्यक है।

पवित्र कुर्आन, संसारिक संबन्दों से नाता तोडने की शिक्षा कदापि नहीं देता। इस्लाम अपने समर्थकों को खुदा की आराधना करने की आज्ञा देता अवश्य है किन्तु सन्यास ग्रहण के पक्ष में नहीं है। यह उन्हे अपना धन खर्च करने की आज्ञा देता तो है किन्तु उन्हें निष्क्रिय, दूषित और साधनहीन करने पक्ष में नहीं है: यह उन्हें विनम्रता का आदेश

देता ज़रूर है परन्तु इसके लिए आत्म सम्मान को नष्ट करने का पक्षपाती नहीं है। यह धर्म अपने मानने वालों को 'क्षमादान' की आज्ञा अवश्य देता है किन्तु उसका तात्पर्य दुष्टों का प्रोत्साहन नहीं है। यह धर्म उन्हें अपने अधिकारों से लाभान्वित होने की अनुमति अवश्य देता है परन्तु दूसरों के अधिकारों को पद-दलित करने की अनुमति कदापि नहीं देता। अन्तिम यह कि इस्लाम अपने समर्थकों को अपने धर्म का प्रचार करने का आदेश अवश्य देता है किन्तु दूसरों के धर्म की अवहेलना करने की अनुमति तनिक भी नहीं देता। [सलाम उन पर जो सत्यमार्ग पर चले]



'तुम्हारा उपास्य एकमात्र ख़ुदा है, तो तुम लोग, (मात्र) उसी का समर्थन करो और (हे नबी) आप विनयशील लोगों को शुभ संदेश दे दीजिये'। [22 : 24]

The non-political and purely religious *Ahmadiyya Movement in Islam* is internationally represented by :—

1. **The Ahmadiyya Anjuman Isha'at-i-Islam Ahmadiyya Buildings, Lahore 7,** Pakistan.
2. **A. A. I. Islam America,** Inc. 69. Nord Roff Street. **San Francisco.**
3. **A. A. I. Islam Trenidad**, 44, Prince of Wales Street, San Fernando, Trenidad.
4. **A. A. I. Islam Surinam**, P. O. Box 926. Surinam Duch Guvana **S. America**.
5. **A. A. I. Islam Capetown,** 49. Kweper Laan, Athlone, Capetown, (**S. Africa**)
6. **Figerean Muslim Mission** 88, Bangbose Street, Lagos, Nigeria,
7. **A. A I. Islam Ghana** P. O Box 1330, Kumasi Ghana, (**Africa**)
8. A. A. **I. Islam Bangla Desh**, Dhan Mandi, Resdental Area Road No 3 Dacca 5, **B. D.**
9. **China Muslim Youth League**, No. 3, Salaw 18, 178 Lane Roosvelt Road, Section Tarpel, Taiwrn
10. A. A. **I. Islam, England.** (Ahmadiyya Hcuse) 56, Longley Road, Toothing London
11. A. A. **I. Islam Figi** 12, Bau street, Suva, Figi Islands.
12. **Die Moscre**, **D**ie Muslimiche Mission Briemner 7-1, Berline. W. Germany.
13. **Institute for Islamic studies**, 53, Kuychrok Laan Den Hagg. Holland.
14. **Greaken** Ahmadiyah **Lahore, Indonesea,** Cabang, Jakarta
15. A. A **I. Islam, Kalamdan Pora, 190002, India**

कामर्शल प्रेस